वर्ष 34 अंक 2 जुलाई 2020

बुद्धिवादी

बुद्धिवादी, मानवतावाद, निरीश्वरवाद और धर्मनिरपेक्षता के प्रसार के लिए
बुद्धिवादी फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित पत्रिका

इस अंक में

आगामी बिहार विधानसभा चुनाव में गैरपार्टी नागरिकों की भूमिका 1

- डॉ रमेन्द्र की किताब 'अमीर और गरीब' का एक अंश 3
- जे० पी० की सम्पूर्ण क्रांति और डॉ० लोहिया की सप्त क्रांति के बीच समानताएँ 4

बिहार विधानसभा चुनाव: महिलाओं की भूमिका 6

- बलात्कार : महिलाओं पर जानलेवा हमला 7
- हाथरस गैंगरेप के तथ्य 8
- पितृसत्ता के अंतिम संस्कार का समय आ पहुँचा है 8

सम्पादक मंडल
डॉ. रमेंद्र
डॉ. कवलजीत कौर
डॉ किरण

सम्पादकीय सहायक
प्रिया नाथ
शीबा नाज़
ललित

216 -ए, श्रीकृष्णपुरी, पटना 800001
Email: dr.ramendra.nath@gmail.com
kawaljeetkaur.patna@gmail.com

Visit the Facebook Page of
Buddhiwadi Foundation

आगामी बिहार विधानसभा चुनाव में गैरपार्टी नागरिकों की भूमिका

डॉ. रमेन्द्र

आगामी बिहार विधानसभा चुनाव में गैरपार्टी नागरिकों तथा जनतंत्र समाज (Citizens for Democracy- CFD) और बुद्धिवादी समाज जैसे गैरपार्टी संगठनों कि भूमिका क्या हो?

यह आज बहुत ही महत्वपूर्ण और प्रासंगिक मुद्दा बन गया है।

पिछले लोकसभा चुनाव में भी जनतंत्र समाज और बुद्धिवादी समाज ने, बी०जे०पी०-आर०एस०एस० को धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ा खतरा मानते हुए, बी०जे०पी० के विरुद्ध अभियान चलाया था। विपक्षी एकता की कमी के कारण,अल्पमत वोट (37%) पा कर भी बी०जे०पी० लोकसभा में बहुमत हासिल करने में सफल रही। इससे प्रधानमंत्री, नरेंद्र मोदी, का मनोबल बढ़ गया, और इनके दूसरे कार्यकाल में सांप्रदायिक, पूंजीवादपरस्त और तानाशाही प्रवृत्तियां और अधिक बढ़ गयीं।

आज कोरोना काल में राजनितिक और आर्थिक स्थिति भयंकर रूप से बदतर है। आम नागरिकों के लिए आज अस्तित्व का सवाल ही सबसे बड़ा सवाल बना हुआ है। भूख, स्वास्थ्य-सेवाओं और शिक्षा की बदहाली मुँह बाये सामने खड़ी है।

दो करोड़ नौकरी हरेक साल देने का वादा करने वाले प्रधानमंत्री के कार्यकाल में, बेरोज़गारी आज़ादी के बाद अपने सबसे चरम पर है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में कच्चे तेल की कीमत कम होने के बावजूद महंगाई सरकार खुद बढ़ा रही है।

अप्रवासी मजदूरों के प्रति केंद्र और राज्य सरकार की असंवेदनशील और क्रूर रवैए को हम देख चुके हैं। जिस तरह अपने घरों तक

पहुंचने की कोशिश में हजारों मजदूर दबे-कटे-कुचले और मारे गए, लेकिन केंद्र और बिहार सरकार तमाशा देखती रही -- ये आज़ादी और बटवारे के बाद की सबसे बड़ी मानवीय त्रासदी थी, जिसे थोड़ी-सी दूरदर्शिता और पूर्व-तैयारी से आसानी से टाला जा सकता था।

प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री, नीतीश कुमार, की तमाम घोषणाओं के बावज़ूद, बिहार सरकार लाखों की संख्या में अन्य प्रांतों से वापस लौटे अप्रवासी मजदूरों को बिहार में रोज़गार देने में असफल रही, और उन्हें मजबूर हो कर फिर से वहीँ वापस लौटना पड़ा, जहाँ से वे लॉकडाउन में तिरस्कार और अपमान झेल कर वापस लौटे थे।

हद तो यह हो गयी कि केंद्र सरकार ने बड़े ही बेशर्मी के साथ संसद में यह कह दिया कि सरकार के पास घर लौटने की कोशिश में मारे गए मजदूरों के बारे में कोई आंकड़े ही नहीं हैं, इसलिए, उनके परिजनों को कोई सहायता देने का सवाल ही नहीं उठता है!

जैसे कि इतना ही काफी नहीं था, केंद्र सरकार ने बड़े ही अलोकतांत्रिक तरीके से संसद में किसान और जन-विरोधी बिल भी पास करा लिए हैं, जिसमे नीतीश कुमार की पार्टी के राज्यसभा के उपसभापति भी साझीदार रहे।

किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलेगा या नहीं, इसका कोई ठिकाना नहीं है। अनाज, दाल, तिलहन, खाने के तेल, प्याज़ और आलू को "आवश्यक वस्तुओं" (Essential Commodities) के दायरे से बाहर निकाल दिया गया है। इसका मतलब यह हुआ की सरकार द्वारा जमाखोरों को, इन जरूरी या आवश्यक वस्तुओं की जमाखोरी करने, और दाम बढ़ने पर बेचने की पूरी छूट दे दी गयी है। सरकार ने खाने की इन जरूरी चीज़ों की कीमत कंट्रोल करने की अपनी जिम्मेवारी से पूरी तरह पल्ला झाड़ लिया है, और इन्हे बाजार के भरोसे छोड़ दिया है।

भ्रष्टाचार का बोलबाला तो कदम-कदम पर है। जिस तरह जनता के पैसे से बनाई गयी जनता की संपत्ति -- सार्वजनिक संपत्ति -- प्रधानमंत्री द्वारा अपने पूंजीपति दोस्तों को बेची जा रही है, यह अपने-आप में भ्रष्टाचार का एक बहुत बड़ा उदाहरण है। यह राज्य-शक्ति और धन-शक्ति के बीच एक गठबंधन है, जिसे लोकशक्ति के जागरण, संगठन और शांतिमय संघर्ष द्वारा ही तोड़ा जा सकता है।

निजीकरण का एक दुष्परिणाम यह भी है कि इससे जाति-आधारित आरक्षण, जो सामाजिक न्याय की दिशा में एक सकारात्मक कदम है, समाप्त हो जाएगा। इस तरह, नरेन्द्र मोदी निजीकरण द्वारा अपने पूंजीपति मित्रों और आरक्षण-विरोधी आर०एस०एस, दोनों को खुश करने की कोशिश कर रहे हैं, चाहे इस कोशिश में आम जनता भले तबाह हो जाए!

धार्मिक अल्पसंख्यकों, खास कर मुसलमानों और ईसाइयों के विरुद्ध नफ़रत और हिंसा फैलाना आर०एस०एस–बी०जे०पी० का एक प्रमुख एजेंडा रहा है। दिल्ली में मुसलमानों के विरुद्ध संगठित हिंसा में गृहमंत्री, अमित शाह, द्वारा नियंत्रित दिल्ली पुलिस की पक्षपातपूर्ण भूमिका देखने लायक थी। अब, दिल्ली पुलिस हिंसा भड़काने वाले बी०जे०पी०-आर०एस०एस से जुड़े लोगों के विरुद्ध कार्यवाही करने की बजाय, CAA (नागरिक संशोधन कानून) का शांतिमय–विरोध करने वालों को UAPA और NSA जैसे अलोकतांत्रिक कानूनों की मदद से जेल में डाल रही है। पहले भी केन्द्र सरकार द्वारा शांतिमय ढंग से विरोध करने वाले प्रोफेसर, डॉक्टर, छात्र-छात्राओं सहित कई मुखर लोगों को जेल में डाल दिया गया है। केन्द्र सरकार की तानाशाही चरित्र को दिखाने के लिए इतना ही काफ़ी है। मानव अधिकारों के प्रति सरकार के रवैये का यह हाल है कि अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त मानव अधिकार संगठन एमनेस्टी इंटरनेशनल की भारतीय शाखा को भारत में अपना काम बंद कर देना पड़ा।

इन सबके अलावा, महिलाओं, दलितों और आदिवासियों के उत्पीड़न का मामला भी एक बड़ा मुद्दा है। लॉकडाउन में महिला उत्पीड़न की घटनाएँ अधिक बढ़ गयीं। आज तो हाथरस, महिला और दलित उत्पीड़न का एक भयानक उदाहरण बना हुआ है। जिस तरह माता-पिता, परिवार के लोगों को बंद कर के, पीड़िता की लाश को रातों-रात जला दिया गया -- यह एक दिल दहलाने वाली घटना है, और पुलिस बर्बरता का चरम उदाहरण !! इस मुद्दे पर बिहार के

मुख्यमंत्री, नीतीश कुमार, की चुप्पी तरस खाने लायक है।

बिहार के मुज़फ़्फ़रपुर कांड से आम तौर से लोग वाकिफ़ है। आज भी कानून-व्यवस्था की स्थिति खस्ते हाल है। हत्या, बलात्कार, लूट-पाट जैसी घटनाएँ दिन-दहाड़े हो रहीं हैं।

ये तो हुए आज के गंभीर हालात। थोड़ा पीछे मुड़ कर देखें, तो पिछली विधानसभा चुनाव में नीतीश कुमार महागठबंधन के मुख्यमंत्री के उम्मीदवार थे। चुनाव में भाजपा की हार हुई थी, और राजद विधानसभा में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में सामने आई थी। नीतीश कुमार को महागठबंधन द्वारा मुख्यमंत्री बनाया गया। इसके कुछ समय बाद, जिस तरह नीतीश कुमार और भाजपा ने, एक-दूसरे के विरुद्ध चुनाव लड़ने के बावजूद, बड़े ही अवसरवादी ढंग से एक सिद्धान्तहीन गठबंधन बना कर, अपने-अपने मतदाताओं के साथ धोखाधड़ी की, जनादेश का अपमान किया, यह अपने-आप में इस विधानसभा चुनाव में एक बड़ा मुद्दा है।
1974 के बिहार आन्दोलन के दौरान, जे० पी० ने प्रतिनिधि-वापसी के अधिकार (Right to Recall) की बात की थी। वह अधिकार तो मतदाताओं को आज तक मिल नहीं पाया है, लेकिन यह विधानसभा चुनाव एक अच्छा मौका है, ऐसे विश्वासघाती प्रतिनिधियों को वापस बुलाने का।

हम मतदाताओं से यह अपील करते है कि वे, अपने स्तर पर निर्णय लेकर, आगामी बिहार विधानसभा चुनाव में, हर विधानसभा क्षेत्र में आर०एस०एस-बी०जे०पी० गठबंधन के विरुद्ध, सबसे सशक्त, धर्मनिरपेक्ष और समतावादी उम्मीदवार को चुन कर, अपना मूल्यवान वोट उसे दें।

अगर बी०जे०पी० गठबंधन-विरोधी वोटों के विभाजन को रोका गया, तो बी०जे०पी० गठबंधन को चुनाव में हराना बहुत आसान है। इससे बिहार को तो तानाशाही-समर्थक, लोकतंत्र-विरोधी सरकार से मुक्ति मिलेगी ही; इसके अलावा, राष्ट्रीय स्तर पर बेलगाम हो रही फासिस्ट ताकतों पर भी लगाम लगेगी।

डॉ रमेन्द्र की किताब 'अमीर और गरीब' का एक अंश :

जयप्रकाश का शांतिमय वर्ग-संघर्ष

जे. पी. के अनुसार, सिर्फ़ ऊपर के वर्गों के विचार-परिवर्तन पर निर्भर रहने से समाज को वांछनीय दिशा में परिवर्तित करने में काफ़ी समय लग जायेगा। इसलिए, इस प्रक्रिया की सीमा को देखते हुए, जे. पी. क्रांति की दिशा में बढ़ने के लिए पिछड़े, दबे लोगों के व्यापक वर्ग-संगठन और शांतिमय वर्ग-संघर्ष को ज़रूरी मानते थे। उनके अनुसार, इस दोहरे दबाव द्वारा ही समाज को समता की दिशा में ले जाया जा सकता है। जब नीचे दबे लोग अपनी ताकत को प्रकट करेंगे, तभी ऊपर वाले वर्ग परिवर्तन के लिए तैयार होंगे। इस तरह, जे. पी.ने क्रांति को गति देने के लिए शांतिमय वर्ग-संघर्ष की वकालत की है।

भारत के सन्दर्भ में गरीबी मिटाने और समता के व्यापक लक्ष्य की और बढ़ने की दृष्टि से जे. पी. के दोहरे दबाव की नीति ही सही मालूम देती है। इसमें कोई शक नहीं कि समृद्ध वर्गों में भी गरीबों से सहानभूति रखने वाले कुछ उदार और प्रगतिशील लोग हैं। अगर गरीबी-सम्बंधी तथ्यों को सही ढंग से पेश किया जाये, और नैतिक युक्ति के आधार पर उनसे अपील की जाये, तो और भी लोग निश्चय ही गरीबों की मदद के लिए सामने आएंगे।

लेकिन दूसरी ओर, समृद्ध वर्गों में ऐसे लोग भी हैं, जो अपने निहित स्वार्थों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं। वे सरकार की गरीब-समर्थक नीतियों का समर्थन करना तो दूर, बल्कि उलटे उसका विरोध करने में लगे रहते हैं। इसलिए, समता की दिशा में बढ़ने के लिए स्वयं गरीब वर्गों का जागृत, और अपने अधिकारों के लिए संगठित होना जरूरी है।

भारत एक लोकतंत्र है और यहाँ प्रत्येक व्यक्ति को -- चाहे वह अमीर हो या गरीब -- एक वोट डालने का अधिकार है। अगर भारत के 45 करोड़ गरीब अपने अधिकारों के लिए जागृत और संगठित हो जायें, और गरीब मतदाता अपनी वोट की ताकत का अपने हक़ में इस्तेमाल करें, तो गरीबी मिटानेऔर समता के लक्ष्य की ओर बढ़ने का काम मुश्किल नहीं है।

जे० पी० की सम्पूर्ण क्रांति और डॉ० लोहिया की सप्त क्रांति के बीच समानताएँ

शीबा नाज़

इस आलेख में हम जे० पी० की सम्पूर्ण क्रांति और डॉ० लोहिया की सप्त क्रांति के बीच समानताओं की चर्चा करेंगे।
जे० पी० और लोहिया के क्रांति के बीच, कुछ मुख्य समानताएँ इस प्रकार है:

1) अमीर-गरीब की गैरबराबरी मिटाने पर बल
2) जाति का विरोध
3) औरत-मर्द समता पर बल

अमीर-गरीब की गैरबराबरी मिटाने पर बल

जे० पी० और लोहिया दोनों की क्रांति की अवधारणा में हम यह पाते है कि दोनों ने ही अमीर-गरीब की गैरबराबरी को समाप्त करने की बात कही है।एक तरफ़ जहाँ लोहिया की सप्त क्रांति में पहली क्रांति ही अमीर-गरीब के गैरबराबरी के ख़िलाफ़ है, वहीं, जे० पी० के सामाजिक क्रांति के अंतर्गत वर्गविहीन समाज की बात की गई है।

जयप्रकाश नारायण के अनुसार, वर्णों, सम्प्रदायों, जातियों में विभाजित समाज की वजह से हमारे अन्दर ऐसे गलत मूल्य, संस्कार एवं अंधविश्वास फैल गए हैं, जिनका न्याय तथा समता की जीवन-शैली से मेल नहीं बैठता है। इसलिए, जे० पी०, यह मानते थे कि समाज की बुराइयाँ, छुआछूत, जात-पात, साम्प्रदायिक झगड़ें सब ख़त्म होने चाहिए। हम सब भारतीय हैं, हम मानव हैं, इन धारणाओं को बढ़ाना चाहिए।

डॉ० लोहिया के अनुसार, अमीर-गरीब का जो अंतर हैं, वह बुनियादी अन्याय है। डॉ० लोहिया बताते हैं कि इन्सान में समता की प्राकृतिक भावना है। डॉ० लोहिया का मानना है कि चाहे जो भी हो, मनुष्य का नियम होना चाहिए : बराबरी।

जाति का विरोध

जे०पी० और लोहिया दोनों ने ही जाति-प्रथा का विरोध किया है। जयप्रकाश ने बिहार आन्दोलन के क्रम में युवाओं से सामाजिक बुराइयों जातिभेद, छुआछूत, तिलक, दहेज इत्यादि के विरुद्ध संघर्ष का आह्वान किया था। जाति-व्यवस्था को समाप्त करने के लिए जयप्रकाश ने अंतरजातीय विवाहों को बढ़ावा देने की बात कही थी। उन्होंने अविवाहित युवाओं से आह्वान किया था कि वे अपने माता-पिता को मना कर अंतरजातीय विवाहों के लिए सहमत करें, तथा अगर वे सहमत नहीं होते हैं, तो उनकी नाराज़गी उठा कर भी, उनके विरोध का सामना करके, दूसरी जातियों में अपना विवाह करें। यहाँ तक कि जनेऊ को उच्च जाति का प्रतीक मान कर, जयप्रकाश ने युवाओं से जनेऊ तोड़ने की अपील भी की थी।
आपातकाल में जेल से रिहा होने के बाद, लिखे गए 'बिहारवासियों के नाम चिट्ठी' में जयप्रकाश ने कहा हैं :

आज भी दलित के साथ सवर्णों का बुरा व्यवहार होता है तथा उन्हें अछूत समझ कर अलग रखा जाता है। इतना ही नहीं, कभी-कभी उसके प्रति सवर्णों का गुस्सा भयंकर रूप ले लेता है। दलितों को ज़िन्दा जला देने कि कई घटनाएँ हुई हैं, तथा होती रहती हैं। सम्पूर्ण क्रांति के सिपाहियों को इस विस्फोटक परिस्थिति का रचनात्मक हल खोजना होगा। इसके लिए उन्हें दलित एवं आदिवासी जनता के जीवन में शामिल होना होगा। यह एक रचनात्मक सेवा है, जिसके बिना सम्पूर्ण क्रांति अधूरी रहेगी।

डॉ० लोहिया का विचार है कि मनुष्य वर्ग और जाति के दो धुरियों के बीच झूल रहा है। वर्ग ढीली जाति है तथा जाति जकड़ा हुआ वर्ग है। इस मामले में डॉ० लोहिया कहते हैं कि भारत जाति को आमूल रूप से समाप्त करने की ओर बढ़े तो अच्छा है।
जाति-व्यवस्था को मिटाने के लिए डॉ० लोहिया ने विशेष अवसर के सिद्धांत की वकालत की है। वो जानते थे कि "इस नीति से ज़हर भी बहुत निकल सकता है", लेकिन डॉ० लोहिया ने यह भी कहा है कि

उस ज़हर के डर से हमें इस नीति की सृजनात्मक और उपचारात्मक चमत्कारी शक्ति से अंधे नहीं बन जाना चाहिए।" डॉ. लोहिया का विश्वास था कि इससे भारत अपने इतिहास की सबसे अधिक स्फूर्तिदायक क्रांति को प्राप्त करेगा। जनता इतनी जीवंत हो जाएगी, जितनी पहले कभी नहीं थी। इस तरह, हम देखते है कि जाति-प्रथा को मिटाने के लिए डॉ० लोहिया ने विशेष अवसर के सिद्धांत पर अत्यधिक बल दिया है।

डॉ० लोहिया के अनुसार, जाति को समाप्त किए बिना भारत विकास नहीं कर सकता। डॉ० लोहिया कहते है कि, "मैं समझता हूँ कि हिंदुस्तान की दुर्गति का सबसे बड़ा कारण जाति-प्रथा है।"

डॉ० लोहिया के विचार में, जब तक तथाकथित "छोटी" जाति के लोग यह समझ न लें कि वे वास्तव में छोटे नहीं है, और जाति-व्यवस्था पूरी तौर से गलत है; तब तक हम समता पर आधारित समाज की ओर नहीं बढ़ सकते हैं।

डॉ० लोहिया के अनुसार, जाति-व्यवस्था को मिटाने का एक ही उपाय है; और वह यह कि करोड़ों दबे हुए लोग अपने पुराने संस्कार, परम्परा, रीती-रिवाज़ो में परिवर्तन ला कर, नई आदतों तथा संस्कारों को अपनाये।

औरत-मर्द समता पर बल

जयप्रकाश और लोहिया दोनों ने ही अपनी क्रांति में नर-नारी समानता पर बल दिया है। जयप्रकाश ने औरतों की शिक्षा और रोज़गार के क्षेत्र में बराबरी के हक़ के साथ, दहेज़-विरोधी बातें भी कहीं है। वहीं, लोहिया ने नर-नारी समानता के लिए विशेष अवसर देने की बात कही है। उन्होंने भी औरत के हक़ के लिए उन्हें पूर्णतः स्वतंत्रता दिलाने की बात कही हैं।
जयप्रकाश ने औरत-मर्द की बराबरी को भी सम्पूर्ण क्रांति का एक महत्वपूर्ण अंग माना है। उनके अनुसार, "शिक्षा और रोज़गार के क्षेत्र में पुरुषों और महिलाओं में कोई फ़र्क नहीं होना चाहिए। हर तरह से महिलाओं को समानता का व्यवहार मिलना चाहिए। सम्पूर्ण क्रांति का यह अभिन्न हिस्सा है।"

जयप्रकाश बिहार आन्दोलन के क्रम में युवाओं से सामाजिक बुराइयों छुआछूत, तिलक-दहेज इत्यादि के विरुद्ध संघर्ष का आह्वान किया था। उन्होंने युवाओं से दहेज के विरुद्ध विद्रोह करने की अपील की थी।

डॉ० लोहिया ने अपने सप्त-क्रांति के विचार के अंतर्गत नर-नारी समता को केन्द्रीय स्थान दिया है। उन्होंने नर-नारी गैरबराबरी को समाजवाद की स्थापना की राह में एक बहुत बड़ी बाधा माना है।

डॉ० लोहिया अन्य पिछड़े वर्गों के अलावा, औरत को भी विशेष अवसर देने के पक्ष में थे। डॉ० लोहिया के अनुसार, औरत-मर्द असमानता को समाप्त किये बिना, दूसरी असमानताओं को समाप्त करना असंभव है।

डॉ० लोहिया के विचार में, लड़की की शादी करना माँ-बाप की ज़िम्मेवारी नहीं, अच्छा स्वास्थ्य और अच्छी शिक्षा दे देने पर उनकी ज़िम्मेवारी ख़त्म हो जाती है।
औरत-मर्द गैरबराबरी के सन्दर्भ में, डॉ० लोहिया के विचारों में, अन्य बातों के अलावा :
(1) दहेज़-प्रथा का विरोध
(2) बहुपत्नी प्रथा का विरोध
(3) विधवाओं की दुर्दशा का विरोध और
(4) नारी की आर्थिक स्वतंत्रता का समर्थन, शामिल हैं।

निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि जे० पी० की सम्पूर्ण क्रांति और डॉ० लोहिया की सप्त क्रांति की अवधारणा में तीन ऊपर बताई गयी समानताएं हैं। ध्यान देने योग्य यह है कि ये तीन समानताएं हमारे प्रमुख संविधान-निर्माता डॉ० अम्बेडकर के विचारों से भी मिलती हुई हैं। उन्होंने भी इन तीनों बातों पर बल दिया है।

(लेखिका दर्शनशात्र विभाग, पटना विश्वविद्यालय में शोधार्थी हैं।)

किसी समुदाय की प्रगति महिलाओं की प्रगति से आंकी जाती है। - डॉ. आम्बेडकर

बिहार विधानसभा चुनाव : महिलाओं की भूमिका

डॉ० कवलजीत

बिहार विधानसभा चुनाव के सन्दर्भ में हम महिलाओं को अपनी आधी आबादी होने का बोध है। प्रमुख मुद्दा यह है कि हमें संविधान द्वारा प्राप्त मताधिकार का पूरी जवाबदेही और ज़िम्मेदारी से प्रयोग करना है।

हम यह जानते हैं कि राजनीति नागरिकों के जीवन का अभिन्न अंग है। नारीवादी कैरोल हैनिश (Carol Hanish) ने 1970 में अपने लेख "The Personal is Political" में सही ही लिखा है कि व्यक्तिगत भी राजनीतिक है। हमारे व्यक्तिगत जीवन से जुड़े कई पहलू हैं, जिनका राजनीतिक नीतियों से सीधा सम्बंध है। अब तो, घरेलू हिंसा को भी पारिवारिक मामला न मान कर, 2005 में बनाये गए घरेलू हिंसा अधिनियम द्वारा महिलाओं को संरक्षण प्राप्त करने का क़ानूनी अधिकार दिया गया है। इस तरह, महिलाओं से जुड़े मुद्दों पर हमें ख़ुद सचेत रहना चाहिए।

हम महिलाओं को मूल्यों और मुद्दों पर गहराई से विचार करना चाहिए। अपना मत इस तरह प्रयोग करना चाहिए कि हम बराबरी, आज़ादी, गरिमा और सुरक्षा सुनिश्चित कर पाएं। सबसे पहले हमें दिशा-निर्देश देने के लिए भारत का संविधान है। हम संविधान द्वारा स्थापित मानदण्डों पर उम्मीदवारों का आंकलन कर सकते हैं। संविधान द्वारा स्थापित मूल्यों -- स्वतंत्रता, समता, बंधुता, न्याय और गरिमा के आधार पर हमें उम्मीदवार का चयन करने का मज़बूत नज़रिया मिल जाता है।

इसके साथ ही, संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 10 दिसम्बर, 1989, को अंगीकार किया गया, मानव अधिकार की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human Rights), भी हमें मताधिकार सम्बंधी निर्णय लेने में मज़बूत स्तम्भ साबित होगा। इस घोषणा के अनुसार, कुछ ऐसे मानवाधिकार हैं, जो कभी छीने नहीं जा सकते हैं - जैसे, मानव की गरिमा और स्त्री-पुरुष समानता का अधिकार।

हमारे संविधान एवं मानवाधिकार का निकट सम्बंध धर्मनिरपेक्षता से है। हमारे उम्मीदवारों को पूर्णतः धर्मनिरपेक्षता का पक्षधर होना चाहिए। इसके अलावा, उम्मीदवारों को महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए प्रतिबद्ध होने को एक ज़रूरी मापदंड मानना चाहिए, और साथ ही, उन्हें महिलाओं की क्षमता पर भरोसा करने वाला होना चाहिए। उन्हें महिलाओं की सुरक्षा की पूरी गारंटी लेने को तैयार रहना चाहिए।

ऊपर ज़िक्र किये गए मानदंडों के साथ ही, मेरे समझ से, उम्मीदवारों को पार्टी द्वारा जारी घोषणा-पत्र में व्यक्त मुद्दों, जैसे, गरीबी, बेरोज़गारी, गैरबराबरी, कानून-व्यवस्था, इत्यादि, को पूरा करने के संकल्प का मज़बूत इरादा होना ज़रूरी है।

मैं अपनी बात स्पष्ट कर दूँ कि हम महिलाओं को विधानसभा में सिर्फ़ महिलाओं की संख्या नहीं बढ़ानी है। हमें जेंडर समानता के पक्षधर विधायकों की उपस्थिति से विधानसभा के चरित्र को बराबरी के सोच पर आधारित बनाना है। आज की पितृसत्तात्मक सोच से अपनी विधानसभा को मुक्त करना बुनियादी आवश्यकता है।

समाज में महिलाओं के विरुद्ध वीभत्स हिंसा और उत्पीड़न को देखते हुए, हमें जेंडर समानता की सोच को बढ़ाना ज़रूरी है। स्त्रियों और बालिकाओं की सुरक्षा लाज़मी है। समाज में पिछले दिनों की घटनाओं के प्रति उम्मीदवारों के रवैये को भी हम अपने चयन का आधार बना सकते हैं। ऐसे तो प्रतिदिन बालिकाओं और महिलाओं के साथ यौन-शोषण, उत्पीड़न, रेप की घटनाएँ घटती ही रहती हैं। फिर भी, कुछ उदाहरणों का ज़िक्र करना आवश्यक है, जिस पर वर्तमान सरकार और उम्मीदवारों के रवैये पर विचार किया जा सकता है :

i. 26 मई, 2018, में टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ़ सोशल साइंस (T I S S) ने बिहार सरकार को एक रिपोर्ट सौंपी थी, जिसमें यह बताया गया था कि मुजफ्फरपुर शेल्टर होम में नाबालिग लड़कियों का यौन-शोषण हो रहा है।

20 जनवरी, 2019, को ब्रजेश ठाकुर और अन्य 19 लोगों को इस मामले में दोषी ठहराया गया।

ii. कोरोना वायरस के पैनडैमिक में लॉकडाउन के दौरान घरेलू हिंसा में बढ़ोतरी हुई है। इसकी ओर वर्तमान सरकार का क्या रवैया रहा?

iii. अप्रवासी मज़दूरों की बेबसी और परेशानी से जूझने में वर्तमान सरकार की क्या भूमिका रही?

iv. जातीय हिंसा की तरह, महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की घटनाओं की रोकथाम के लिए सरकार और उम्मीदवारों का

क्या रवैया रहा? (यू० पी० हाथरस की घटना का विवरण पृष्ठ : 8 पर देखें) इस पर हमारी सरकार और उम्मीदवार की क्या प्रतिक्रिया है? -- इस पर गौर करना आवश्यक है।

यह सही है कि हम जेंडर समानता की सोच पर अधिक ज़ोर देते हैं। फिर भी, हम महिलाओं के आरक्षण के पक्षधर हैं। महिला आरक्षण बिल 9 मार्च, 2010, को राज्यसभा में पारित हो चुका है। इस बिल के तहत संसद और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देने का प्रस्ताव था। यह विधेयक लोकसभा में पारित नहीं हो पाया।

वर्तमान लोकसभा में भारतीय जनता पार्टी का पूर्ण बहुमत है। महिला आरक्षण बिल आसानी से पारित हो सकता है। कितने ही अमानवीय किसान-विरोधी, मज़दूर-विरोधी बिल वर्तमान सरकार द्वारा, संसदीय मर्यादा को ताक पर रख कर, लोकसभा में पारित किये गए। लेकिन, महिला आरक्षण बिल पर चर्चा भी नहीं हुई।

साथ ही, महिलाओं की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए, उनके लिए रैन बसेरा, नारी निकेतन की बहुत आवश्यकता है।

अंत में, महिलाओं से भी अपेक्षा करुँगी कि स्वतंत्र-चिंतन कर, खुद का हित समझ कर, सूझ-बूझ से वोट दें। वैसे तो, महिलाओं की भागीदारी मतदाताओं के रूप में काफ़ी बढ़ी है।

हमारा उम्मीदवार साम्प्रदायिकता का समर्थन तो बिलकुल न करे। धर्मों और जातिओं के दरम्यान नफ़रत बढ़ाने से महिलाएं ही शिकार होती हैं। हमें उस पार्टी और उन उम्मीदवारों को दुबारा चुनें जाने से रोकना है, जो साम्प्रदायिकता को बढ़ाते हैं।

हमें धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक मूल्यों का पालन करने वाले, समता और सबकी गरिमा के समर्थक को, अपना विधायक बनाने की कोशिश करनी चाहिए। इसके लिए साम्प्रदायिक उम्मीदवार को हराने के लिए उसके समक्ष सबसे सशक्त उम्मीदवार को वोट देना चाहिए। समता और सुरक्षा हमारे परिवार और समाज के लिए नितांत ज़रूरी है। इस की दिशा में बढ़ने का हमारा प्रयास होना चाहिए। अपने हालातों को सुधारने के लिए सही प्रतिनिधि चुनने का चुनाव एक मौका है।

बलात्कार : महिलाओं पर जानलेवा हमला!

डॉ किरण

हर दिन कितनी महिलाएं, जिसमें छोटी-छोटी बच्चियां भी हैं, बलात्कार रूपी हिंसक हमले का शिकार होती हैं। हाथरस की 19 वर्षीय युवती बलात्कार और हिंसा की शिकार हुई। पंद्रह दिनों तक वह जीवित रही, न उसे सही इलाज मिला, न ही न्याय। उसकी मौत के बाद उसके शव को रातों-रात, आनन-फानन यू. पी. पुलिस और प्रशासन ने फूंक दिया, ताकि कोई सबूत न बचे। अब यह कहा जा रहा है कि बलात्कार हुआ ही नहीं! उसकी हड्डियों को तोड़ा गया, जीभ काटी गयी, इस तरह से उसके शरीर को क्षत-विक्षत किया गया कि वह बच भी नहीं सकी। क्या यह प्रमाणित नहीं करता कि उसने बलात्कारियों से बचने के लिए संघर्ष किया, और उसपर काबू पाने के लिए ही उसे मारा गया, हड्डियाँ तोड़ी गयी, चीख न सके इसके लिए जीभ काटी गयी? क्या यह जुर्म नहीं है? केवल बलात्कार नहीं हुआ, ये बोल कर के कोई इस अपराध से कैसे बच सकता है?

"बलात्कार" का शाब्दिक अर्थ है, बलपूर्वक किया गया कृत्य या हमला। सम्बंध बना या नहीं, इसकी खोज और जाँच के दौरान पीड़िता को बार-बार अपमान और ज़िल्लत से गुज़रना पड़ता है। अगर मौत हो गयी तो उसका चरित्र-हनन किया जाता है। बड़े दुःख की बात है कि तथाकथित सभ्य समाज के पुरुष बलात्कार जैसा अपराध करते है। पुरुषसत्तात्मक समाज की प्रथायें और मूल्य औरतों पर अत्याचार और ज़ुल्म करती हैं। यहाँ तक कि 6 वर्ष से छोटी बच्चियों का बलात्कार और हत्या भी होती है। यह इसी समाज के बाल-विवाह की प्रथा का नतीजा है कि छोटी-छोटी बच्चियों को, जिन्हें अभी अपने शरीर और वैवाहिक जीवन की समझदारी भी नहीं हुई होती हैं, पुरुष यौन-शोषण का शिकार बनाते हैं। जाति-व्यवस्था आधारित समाज ऊंच-नीच में बटी है। अपने उच्च होने का अहंकार जाति, वर्ण, वर्ग और सत्ता का अहंकार ही कमजोरों और महिलाओं पर ज़ुल्म ढाने की मानसिकता तैयार करती है। ऐसे में अगर सत्ता और प्रशासन या न्यायिक संस्थानों में, अलोकतांत्रिक, संविधान के समानता

और स्वतंत्रता की मूल्यों को नकारने वाले यथास्थितिवादी तानाशाह बैठे हों, तो बलात्कारियों को बचाने का काम ही किया जाता रहेगा। हाथरस की युवती और कितनी बच्चियाँ, जो ऐसी हिंसा और मौत का शिकार बन चुकी हैं, केवल उनके ही लिए ही नहीं, बल्कि समस्त महिला वर्ग की सुरक्षा-स्वतंत्रता और न्याय के लिए मज़बूती से संगठित होकर आवाज़ उठानी चाहिए; ताकि ऐसी घटनाएं रुकें, और यदि हों, तो तत्काल न्याय मिले।

हाथरस गैंगरेप के तथ्य

संकलन - शीबा नाज़

उत्तर प्रदेश के हाथरस जिले में, 14 सितम्बर, 2020, को, 19 वर्षीय युवती के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया था। इसके अलावा, उनके साथ बुरी तरह मारपीट भी की गयी थी। उनकी रीढ़ की हड्डी में गंभीर चोटें आयी थीं। आरोपियों ने उनकी जीभ भी काट दी थी। उनका इलाज अलीगढ़ के एक अस्पताल में चल रहा था। करीब 10 दिन के इलाज के बाद उन्हें दिल्ली के सफ़दरगंज अस्पताल में भर्ती कराया गया था।

घटना के 9 दिन बीत जाने के बाद, 21 सितंबर को, युवती होश में आयी, तो अपने साथ हुई आपबीती अपने परिजनों को बताई। इसके बाद 23 सितंबर को उन्होंने पुलिस के समक्ष बयान दिया।

आरोप है कि युवती के ही गांव के, सवर्ण जाति के चार लोगों ने उनके साथ बलात्कार किया था। युवती के भाई की शिकायत के आधार पर चार आरोपियों को गिरफ्तार किया गया। 19 सितम्बर, 2020, को 20 वर्षीय संदीप को गिरफ्तार किया गया। 22 सितम्बर, 2020, को पीड़िता के गैंगरेप बयान के बाद अन्य तीन आरोपियों -- संदीप के चाचा, रवि (35 वर्ष), और उसके दो दोस्त, लवकुश (23 वर्ष) तथा रामू (26 वर्ष), को गिरफ्तार किया गया।

घरवालों के लाख गिड़गिड़ाने के बावजूद पीड़िता का शव पुलिस ने ज़बरदस्ती जलवा दिया। युवती की मौत के बाद कथित तौर पर परिवार की सहमति के बिना जल्दबाज़ी में किये गए अंतिम संस्कार के मामले में इलाहाबाद हाईकोर्ट की लखनऊ पीठ द्वारा स्वतः संज्ञान लेकर राज्य सरकार को नोटिस जारी किये जाने के बाद, उत्तर प्रदेश सरकार ने बीते 3 अक्टूबर को मामले की जांच सीबीआई को सौंपें जाने की सिफारिश की थी।

वर्तमान में कोर्ट के संरक्षण में सीबीआई द्वारा इस मामले की जाँच जारी है। यह मांग भी की जा रही है कि इस मामले में ट्रायल उत्तर प्रदेश से बाहर हो।

इलाहाबाद हाईकोर्ट के लखनऊ बेंच ने इस मामले की सुनवाई के दौरान, हाथरस के डीएम से पूछा था -
अमीर की बेटी होती तो ऐसा ही करते?

पितृसत्ता के अंतिम संस्कार का समय आ पहुँचा है

कमला भसीन

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार दुनिया की हर तीन में से एक औरत पर हिंसा होती है। यानी, सौ करोड़ औरतों पर हिंसा होती है। यह दुनिया की सब से बड़ी जंग है जो कभी बंद नहीं होती और सबसे दुःख और शर्म की बात यह है कि यह जंग सबसे ज़्यादा परिवारों के अंदर होती है।

हम किसी पर हिंसा तभी कर सकते हैं, या करते हैं जब हम उन्हें अपने से कमतर और कमज़ोर समझते हैं या, जब हम मानते हैं कि वे पूर्ण इंसान नहीं हैं, कम समझ है, इसलिए उनका अपमान, उत्पीड़न व शोषण किया जा सकता है। उनको समझाने के लिए हिंसा का इस्तेमाल किया जा सकता है।

महिलाओं और लड़कियों पर होने वाली हिंसा के पीछे पितृसत्तात्मक विचारधारा और ढांचा है। अगर पितृसत्ता है तो औरतों पर हिंसा होगी ही। उसके बिना यह अन्यायपूर्ण व्यवस्था चल ही नहीं सकती। पितृसत्ता के कारण ही पूरी दुनिया में औरतों पर हिंसा हो रही है और दुनिया के किसी भी देश में स्त्री-पुरुष समानता नहीं है। इसलिए स्त्री-पुरुष समानता स्थापित करने के लिए और हिंसा मिटाने के लिए पितृसत्ता को गहराई से समझना और उसे जड़ से मिटाना ज़रूरी है।

क्या है पितृसत्ता?

पितृसत्ता एक सामाजिक व्यवस्था है, जिसमें पुरुषों को स्त्रियों से उत्तम माना जाता है, और जिसमें संसाधनों, निर्णयों और विचारधारा पर पुरुषों का अधिक नियंत्रण

होता है। अन्य सामाजिक व्यवस्थायों की तरह ही, पितृसत्ता एक ढांचा भी है, और एक विचारधारा भी। वह है, जो दिखाई देता है, जैसे परिवार के मुखिया पुरुष हैं, वंश का नाम उनसे चलता है, परिवार की संपत्ति पर उनका ज़्यादा अधिकार है, उन्हें हर तरह की आज़ादी है, सामाजिक संस्थानों पर उनका अधिक अधिकार है, आदि।

कोई भी सामाजिक व्यवस्था व ढांचा तभी चल सकते हैं जब लोग उन्हें स्वीकारें और मानें। इसके लिए ज़रूरी होती है एक विचारधारा और मानसिकता। यह विचारधारा हर समय दोहराई जाती है। हवा के जैसे, यह चारों तरफ होती है, मगर दिखाई नहीं देती। पुरुषसत्ता को मनवाने और पुख्ता बनाने के लिए, पुरुषों को उत्तम और महिलाओं को निम्न बताने वाली सोच को, भाषा, मुहावरों, कहानियों, गीतों, फिल्मों, विज्ञापनों, त्योहारों के माध्यम से सतत फैलाया जाता है।

धार्मिक व अन्य कहानियों में कहा जाता है कि पुरुष परिवार के मुखिया हैं, वे पति-परमेश्वर हैं, वंश चलाने वाले हैं, इसलिए पारिवारिक संपत्ति पर उनका अधिक अधिकार है, आदि। पुरुष बलवान हैं, तार्किक हैं, स्त्रियाँ कमज़ोर हैं, कम बुद्धि हैं, उन पर नियंत्रण करना आवश्यक है। बेटियां पराया धन हैं, वे बोझ हैं, वे अंतिम संस्कार नहीं कर सकतीं, माहवारी के दौरान वे अछूत हैं, आदि। फिर पुत्र पाने के लिए, पति की लम्बी उम्र के लिए व्रत, ऐसी मान्यतायें और रीती-रिवाज़ पुरुषसत्ता को बल देते रहते हैं और हम इस व्यवस्था को मानते रहते हैं।

अगर कोई पूछे कि पुरुष कैसे और क्यों स्त्रियों से बेहतर हैं तो इसमें कोई तर्क नहीं हैं। पुरुषों के पास सत्ता थी तो उन्होंने कह दिया कि पुरुष बेहतर हैं। घोषित करने के बाद मन-गढ़ंत तर्क दे दिए। यह ठीक वैसे है जैसे जातिवाद में ब्राह्मणों ने खुद को सब से उत्तम घोषित कर दिया। आम जनता को दिया तर्क था कि ब्राह्मण ब्रह्माजी के सिर से पैदा हुए हैं, इसलिए सबसे बेहतर हैं। हमने तो किसी को किसी के सिर से पैदा होते नहीं देखा। सभी इंसान औरतों की योनि से ही पैदा होते हैं। यानी, पितृसत्ता और जातिवाद दोनों अन्धविश्वास के अलावा कुछ नहीं हैं, मगर ये हमारे ज़िन्दगी में छाए हुए हैं और गहरी असामनता फैलाये हुए हैं। पितृसत्ता और जातिवाद दोनों भारतीय संविधान का उल्लंघन और अपमान करते हैं।

पितृसत्ता में स्त्रियों पर तरह-तरह के बंधन और नियंत्रण

पितृसत्ता में स्त्रियों पर कई तरह के नियंत्रण होते हैं, जैसे उनकी श्रम शक्ति पर नियंत्रण। वे क्या पढ़ेंगी और क्या काम करेंगी, उन्हें काम करने भी दिया जायेगा या नहीं, उनके काम का क्या दाम दिया जायेगा, आदि। परिवारों के अंदर सुबह से शाम तक औरतें जो काम करती हैं उसे आज भी आर्थिक गतिविधि या काम नहीं माना जाता, हालांकि United Nations Development Programme (UNDP) के अनुसार इस काम की सालाना कीमत है 11 ट्रिलियन डॉलर।

औरतों का अपनी प्रजनन शक्ति पर भी अक्सर अपना नियंत्रण नहीं होता। उनकी शादी कब होगी, वे कब और कितने बच्चे पैदा करेंगी, वे खुद तय नहीं करतीं। पहले परिवार और समाज तय करते थे, अब सरकारें भी कानून बना कर तय करती हैं।

औरतों की यौनिकता पर भी औरों का नियंत्रण हो सकता है, जैसे कम उम्र में शादी करके उनकी यौनिकता पर नियंत्रण कर पुरुषों को सौंप दिया जाता है। एक तरफ उनकी यौनिकता को दबाने के लिए अपनी बहु-बेटियों को पर्दों और कपड़ों से ढका जाता है, उन्हें घरों से बाहर नहीं जाने दिया जाता और दूसरी तरफ कुछ औरतों को नंगा करके देह बाज़ारों में बैठाया जाता है, विज्ञापनों में उनका इस्तेमाल किया जाता है, आइटम नंबरों में नचाया जाता है। पितृसत्ता को दोनों तरह की औरतों की ज़रूरत है। लड़कियों और औरतों का यौन शोषण और बलात्कार किया जाता है।

लड़कियों और औरतों पर नियंत्रण रखने के लिए उनके चलने फिरने पर रोक लगाना ज़रूरी है और यह किया जाता है। लड़के और पुरुष कभी भी, कहीं भी आ जा सकते हैं, मगर औरतों पर पाबंदियां होती हैं।

पुरुष सत्ता में हर तरह के संसाधनों पर पुरुषों का अधिक नियंत्रण होता है। लड़कों के हिस्से में भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवायें, संपत्ति अधिक आती हैं। आज इक्कीसवीं सदी में भी बिरला, टाटा, अम्बानी, बुश, कैनेडी, परिवारों में पुत्र ही संपत्ति और सत्ता के मालिक होते हैं।

International Labour Organisation के अनुसार दुनिया में किये जाने वाले काम का 66% काम

महिलाएं करती हैं, जबकि दुनिया में बांटे जाने वाली आय का सिर्फ 10% उन्हें प्राप्त होता है और वे सिर्फ़ 1% संपत्ति की मालिक हैं।

इस के साथ सभी आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक, क़ानूनी संस्थानों पर भी पुरुष का अधिक नियंत्रण होता है। यही है पुरुषतंत्र और यह हमारे चारों ओर विद्यमान हैं।

दुर्भाग्यवश हमारे परिवार और धर्म, जिन्हें समानता और न्याय के पक्ष में खड़ा होना चाहिए था, वे ही पितृसत्ता के सबसे बड़े हिमायती और पाठशालाएं या मदरसे बने बैठे हैं। यहीं पर पितृसत्ता के पाठ पढ़ाये और रटाये जाते हैं। यहाँ से पितृसत्ता को हटाना बहुत ज़रूरी है और यही सबसे ज़्यादा मुश्किल भी है। धर्मों पर सवाल उठाने से तो लोग बहुत ही डरते हैं। इस डर को त्यागना होगा ताकि हमारा सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ, यानि भारत का संविधान जी सके।

पितृसत्ता में स्त्रियाँ एकदम सत्ताहीन नहीं होतीं

ऐसा नहीं है कि पितृसत्ता में स्त्रियों के पास बिलकुल सत्ता नहीं होती। हमारी कई नानियों, दादियों, माओं का बहुत बड़ा रुतबा और दबदबा हो सकता है। जो औरतें पितृसत्ता को मानती हैं और उसे औरों पर लागू करती हैं और जो क़ाबिल हैं, उन्हें मान और अधिकार दिए जा सकते हैं, मगर पितृसत्ता की मर्यादा के अंदर।

हमने देखा है कि राजा की मौत के बाद उनकी रानी ने सत्ता संभाली। दुर्भाग्यवश प्रजातंत्र में भी यही हो रहा है। प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति पुरुष के मरने के बाद उनकी कई बेटियों और पत्नियों ने ये पद संभाले हैं, ख़ास तौर से दक्षिण एशिया में। उदाहरण के लिए श्रीमती बन्दारनाय्के, श्रीमती इंदिरा गाँधी, मोहतरमा बेनज़ीर भुट्टो, मोहतरमा ख़ालिदा ज़िया, आदि| मेरी नज़र में ये नारी शक्ति के उदाहरण नहीं हैं। ये तो पितृसत्ता की मज़बूती और प्रजातंत्र की कमज़ोरी के उदाहरण हैं।

सिर्फ़ पुरुष नहीं, स्त्रियाँ भी पितृसत्तामक हो सकती हैं और होती हैं। चूंकि स्त्रियां भी पितृसत्तामक परिवारों और समाजों में पैदा होती हैं, पितृसत्तामक धर्मों को मानती हैं, इसलिए वे भी पितृसत्ता को मानती हैं। नयी पीढ़ी को पितृसत्ता के पाठ पढ़ाने की जिम्मेदारी भी इनको सौंपी जाती है। है न विडम्बना? अपने पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मारना यही है। सास-बहु के झगड़ों के किस्से रोज़ सुनाए जाते हैं और कहा जाता है कि औरत ही औरत की दुश्मन है। मगर सास और जमाई के झगड़ों के किस्से नहीं है। पत्नियों की माएं तो जमाईओं के नखरे झेलती नहीं थकतीं। बहुत-सी माएं अपने राजा बेटों को जी भर के बिगाड़ती हैं, बेटियों के साथ भेद-भाव करती हैं, उन पर पहरा बैठाती हैं।

'नारीवाद' पुरुषों के ख़िलाफ़ नहीं हैं, वे पितृसत्ता के ख़िलाफ़ हैं

नारीवादियों पर अक्सर यह इल्ज़ाम लगाया जाता है कि वे पुरुषों के ख़िलाफ़ हैं, मगर यह सरासर गलत है। हम नारीवादी, पुरुषों के ख़िलाफ़ नहीं हैं, पितृसत्ता के ख़िलाफ़ हैं। अगर पुरुष पितृसत्तात्मक हैं तो हम ज़रूर उनके ख़िलाफ़ हैं, और हम पितृसत्तात्मक औरतों के भी ख़िलाफ़ हैं। बहुत से पुरुषों ने पितृसत्ता का विरोध किया है और कर रहे हैं और वे नारीवादी हैं, वे स्त्री-पुरुष समानता के हक़ में हैं।

सच तो यह हैं कि स्त्री-पुरुष समानता की लड़ाई स्त्री और पुरुष के बीच की लड़ाई है ही नहीं। यह तो दो मानसिकताओं के बीच की लड़ाई है। एक मानसिकता मानती है कि पितृसत्ता बेहतर है। दूसरी मानसिकता मानती है कि समानता बेहतर है यानी एक मानसिकता संविधान के ख़िलाफ़ है, और दूसरी उसके पक्ष में है, दोनों तरफ स्त्रियाँ भी हैं और पुरुष भी।

पितृसत्ता पुरूषों का भी बहुत नुकसान कर रही है

पितृसत्ता में पुरुषों और लड़कों को अनगिनत फ़ायदे होते हैं, मगर गौर से देखें तो उन्हें नुकसान भी बहुत होते हैं। ठीक वैसे जैसे पितृसत्ता लड़कियों को ज़नाने रूप में ढालती है, वह लड़कों को मर्दाना बनाती है, चाहे वे ये चाहें या नहीं – "तुम लड़के हो तुम रोओगे नहीं", "लड़के अपनी कमज़ोरी का बयान नहीं करते, वे भावनाएं नहीं दिखा सकते", "तुम को हर हाल में अपनी ताकत दिखानी है", "तुम घर के काम में मां का हाथ नहीं बटाओगे", आदि। ...

हर बराबरी, इंसाफ़ और अमनपसंद इंसान को अपने दिलोदिमाग़, परिवार,समाज और संस्था से पितृसत्ता को हटाना चाहिए, ताकि देश का हर लड़का और लड़की इज्ज़त से जी सके, आगे बढ़ सके और हर परिवार में हिंसा की जगह प्यार का आलम हो।

पितृसत्ता में बेटियों को अंतिम संस्कार नहीं करने दिया जाता, मगर पितृसत्ता का अंतिम संस्कार हम पूरे ज़ोर शोर से, बराबरी पसन्द पुरुषों के साथ मिल कर करेंगी और भारत के संविधान का जश्न मनाएँगी।